ललिता चालीसा



ललिता चालीसा

कुण्डलिनी चालीसा
और ललिता पंचकम् सहित



आहूजा प्रक[illegible]न

गांधी नगर, दिल्ली-[illegible]



प्रकाशक :

आहूजा प्रकाशन, दिल्ली-110031

विक्रय केन्द्र :

महावीर मार्किट, 1528-29, नई सड़क, दिल्ली-6

फोन : 23271214

कार्यालय :

623, रघुबरपुरा नं. 1, गांधी नगर, दिल्ली-31

फोन : 22079729 फैक्स : 22077351

मूल्य : 7.00

मुद्रक :

जो सज्जन इस पुस्तक के पाठ से लाभान्वित हो, वह कामनापूर्ति के पश्चात् इस पुस्तक की 21, 51, 101 या इससे अधिक प्रतियाँ परिजनों, भक्तों अथवा धर्मप्रचार के लिए बाँटना चाहें, वह प्रकाशक से सम्पर्क करें, उन्हें पुस्तकें लागत मात्र मूल्य पर दी जाएंगी। --प्रकाशक



श्री ललिता चालीसा

पाठ की विधि

सायं–प्रातः किसी एक समय भी जैसा अवकाश हो, हाथ-पाँव धोकर पूर्वाभिमुख होकर बैठ जायें। प्रथम दिन ही (बाकी दिन नहीं) धूप जलायें, दीया जलायें और बतासे या गुड़ का भोग लगायें। "ललिता माँ आपके चालीसा का पाठ कर रहा हूँ यह मेरे लिये हर प्रकार शुभ हो। ललिता शुभ हो।" ऐसा संकल्प

करके पाठ करना प्रारम्भ करें। जिस कार्य को सिद्ध करने का विचार उसे हो मन-ही-मन कहें।

१. नित्य एक बार पढ़ें तो दरिद्रता न रहे।

२. दो बार पढ़ें तो शत्रु दूर हों।

३. तीन बार पढ़ें तो राजपक्ष से अनुकूलता मिले।

४. २१ या ७ दिन तक प्रतिदिन पढ़ें तो मनोरथ सिद्ध हों, सन्तान-सम्पत्ति का सुख मिले, बन्धन से मुक्ति मिले।

अस्तु, गुरुवर भारतीय जी अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तित्व थे। श्रीविद्या का आराधन एवं शक्तिपात विद्या का प्रचार-प्रसार उनके जीवन का लक्ष्य बन गया था। वस्तुतः महात्माओं का जीवन ही संसार के कष्टों को दूर करने के लिये होता है। इस ललिता चालीसा के पाठक व साधकगण आज भी उन सिद्ध पुरुष को प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं उनके आशीर्वाद से यह चालीसा निश्चित ही पाठकों को यथेष्ठ लाभ प्रदान करेगा। चालीसा दिव्यशक्ति सम्पन्न है। इसका पाठ करने से कष्ट अवश्य मिटेंगे।

॥ श्री ललितायै: नम: ॥

अथ श्री ललिता चालीसा प्रारम्भ

जयति जयति जय ललित्ते माता।
तब गुण महिमा है विख्याता ॥ १ ॥
तू सुन्दरि, त्रिपुरेश्वरी देवी।
सुर नर मुनि तेरे पद सेवी ॥ २ ॥
तू कल्याणी कष्ट निवारिणी।
तू सुख दायिनी, विपदा हारिणी ॥ ३ ॥
मोह विनाशिनी दैत्य नाशिनी।
भक्त भाविनी ज्योति प्रकाशिनी ॥ ४ ॥
आदि शक्ति श्री विद्या रूपा।
चक्र स्वामिनी देह अनूपा ॥ ५ ॥

हृदय निवासिनी भक्त तारिणी।
नाना कष्ट विपति दल हारिणी ॥ ६ ॥
दश विद्या है रूप तुम्हारा।
श्री चन्द्रेश्वरि! नैमिष प्यारा ॥ ७ ॥
धूमा, बगला, भैरवी, तारा।
भुवनेश्वरी, कमला, विस्तारा ॥ ८ ॥
षोडशी, छिन्नमस्ता, मातंगी।
ललिते! शक्ति तुम्हारी संगी ॥ ९ ॥
ललिते तुम हो ज्योतित भाला।
भक्त जनों का काम संभाला ॥ १० ॥
भारी संकट जब-जब आये।
उनसे तुमने भक्त बचाये ॥ ११ ॥

जिसने कृपा तुम्हारी पाई।
उसकी सब विधि से बन आई ॥ १२ ॥
संकट दूर करो माँ भारी।
भक्त जनों को आस तुम्हारी ॥ १३ ॥
त्रिपुरेश्वरी, शैलजा, भवानी।
जय जय जय शिव की महारानी ॥ १४ ॥
योग सिद्धि पावें सब योगी।
भोगें भोग, महा सुख भोगी ॥ १५ ॥
कृपा तुम्हारी पाके माता।
जीवन सुखमय है बन जाता ॥ १६ ॥
दुखियों को तुमने अपनाया।
महामूढ़ जो शरण न आया ॥ १७ ॥

तुमने जिसकी ओर निहारा।
मिली उसे सम्पत्ति, सुख सारा॥ १८ ॥
आदि शक्ति जय त्रिपुर-प्यारी।
महाशक्ति जय जय, भयहारी॥ १९ ॥
कुल योगिनी, कुण्डलिनी रूपा।
लीला ललिते करें अनूपा॥ २० ॥
महा-महेश्वरी, महा शक्ति दे।
त्रिपुर-सुन्दरी सदा भक्ति दे॥ २१ ॥
महा महानन्दे, कल्याणी।
मूकों को देती हो वाणी॥ २२ ॥
इच्छा-ज्ञान-क्रिया का भागी।
होता तब सेवा अनुरागी॥ २३ ॥

जो ललिते तेरा गुण गावे।
उसे न कोई कष्ट सतावे॥ २४॥
सर्व मंगले ज्वाला-मालिनी।
तुम हो सर्व शक्ति संचालिनी॥ २५॥
आया माँ जो शरण तुम्हारी।
विपदा हरी उसी की सारी॥ २६॥
नामा-कर्षिणी, चित्ता-कर्षिणी।
सर्व-मोहिनी सब सुख-वर्षिणी॥ २७॥
महिमा तब सब जग विख्याता।
तुम हो दयामयी जगमाता॥ २८॥
सब सौभाग्य-दायिनी ललिता।
तुम हो सुखदा करुणा कलिता॥ २९॥

आनन्द, सुख, सम्पत्ति देती हो।
कष्ट भयानक हर लेती हो॥३०॥
मन से जो जन तुमको ध्यावे।
वह तुरन्त मनवांछित पावे॥३१॥
लक्ष्मी, दुर्गा, तुम हो काली।
तुम्हीं शारदा चक्र-कपाली॥३२॥
मूलाधार निवासिनी जय जय।
सहस्त्रार गामिनी माँ जय जय॥३३॥
छः चक्रों को भेदने वाली।
करती हो सबकी रखवाली॥३४॥
योगी भोगी क्रोधी कामी।
सब हैं सेवक सब अनुगामी॥३५॥

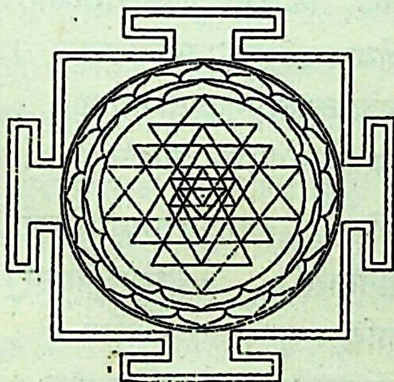
सबको पार लगाती हो माँ।
सब पर दया दिखाती हो माँ॥ ३६ ॥
हेमावती, उमा, ब्रह्माणी।
भण्डासुर का, हृदय विदारिणी॥ ३७ ॥
सर्व विपति हर, सर्वाधारे।
तुमने कुटिल कुपंथी तारे॥ ३८ ॥
चन्द्र-धारणी, नैमिषवासिनी।
कृपा करो ललिते अघनाशिनी॥ ३९ ॥
भक्त जनों को दरस दिखाओ।
संशय भय सब शीघ्र मिटाओ॥ ४० ॥
जो कोई पढ़े ललिता चालीसा।
होवे सुख आनन्द अधीसा॥ ४१ ॥

जिस पर कोई संकट आवे।
पाठ करे संकट मिट जावे॥ ४२ ॥
ध्यान लगा पढ़े इक्कीस बारा।
पूर्ण मनोरथ होवे सारा॥ ४३ ॥
पुत्र-हीन सन्तति सुख पावे।
निर्धन धनी बने गुण गावे॥ ४४ ॥
इस विधि पाठ करे जो कोई।
दुःख बन्धन छूटे सुख होई॥ ४५ ॥
जितेन्द्र चन्द्र भारतीय बतावें।
पढ़ें चालीसा तो सुख पावें॥ ४६ ॥
सबसे लघु उपाय यह जानो।
सिद्ध होय मन में जो ठानो॥ ४७ ॥

ललिता करे हृदय में बासा।
सिद्धि देत ललिता चालीसा॥ ४८ ॥

॥ दोहा ॥

ललिते माँ अब कृपा करो, सिद्ध करो सब काम।
श्रद्धा से सिर नाय कर, करते तुम्हें प्रणाम।



श्री ललिता पंचकम्

प्रातः स्मरामि ललितावदनारविन्दं,
बिम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम्।
आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्डलाढ्यं,
मन्दस्मितं मृगमदोज्जवलभालदेशम्॥ १ ॥

प्रातर्भजामि ललिताभुजकल्पवल्लीं,
रक्तांगुलीयलसदंगुलिपल्लवाढ्याम् ।
माणिक्यहेमवलायांगदशोभमानां ,
पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषुसृणीर्दधानाम् ॥ २ ॥

प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्दं,
भक्तेष्टदाननिरतं भवसिन्धुपोतम्।
पद्मासनादि—सुरनायकपूजनीयं ,
पद्मांकुशध्वजसुदर्शनलाञ्छनाढ्यम् ॥ ३ ॥

प्रातः स्तुवे परशिवां ललितां भवानीं,
त्रय्यन्तवेद्यविभवां करुणानवद्याम्।
विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूतां,
विद्येश्वरीं निगमवाङ्मनसाऽतिदूराम्॥ ४॥

प्रातर्वदामि ललिने तव पुण्यनाम,
कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति।
श्रीशाम्भवीति जगतां जननी परेति,
वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति॥ ५॥

यः श्लोकपंचकमिदं ललिताम्बिकायाः,
सौभाग्यदं सुललितं पठति प्रभाते।
तस्मै ददाति ललिता झटिति प्रसन्ना,
विद्या श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्तिम्॥ ६॥

कुण्डलिनी चालीसा

सिर सहस्त्रदल कौ कमल, अमल सुधाकर ज्योति।
ताकी कनिका मध्य में, सिंहासन छवि होति॥

मूलाधार आदि षट्चक्रों में सर्वोपरि स्थान श्री सिद्धेश्वर परम शिव रूप गुरु का है, जो सहस्र दल कमलकर्णिका के अन्तर्गत ह, स, ख, फ्रं, ह, क्ष, म, ल, व, र, यं रूपी द्वादश दल पद्म में अ, क, थ त्रिरेखा और ह, ल, क्ष कोण से भूषित कामकला, त्रिकोण में नाद-बिन्दु रूपी मणिपीठ पर विराजमान हैं। उनकी आभा निर्मल चन्द्रमा की भाँति है।

शांत भाव आनंदमय, सम चित विगत विकार।
शशि रवि अगिन त्रिनेत्रयुत, पावन सुरसरिधार॥

वे परम शिव रूप गुरु शान्त भाव में हैं, सम्पूर्ण विकारों से रहित समचित्त हैं तथा आनन्दमय हैं। उनके सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूप तीन नेत्र हैं तथा सिर पर पवित्र गंगा की धारा है।

सोहै अंक बिलासिनी, अरुन बरन सौ रूप।
दक्षिण भुज गल माल शिव, बाएं कमल अनूप॥

शिव के अंक में शिवा सुशोभित हैं, जिनका सिन्दूर की भाँति अरुण वर्ण है, उन्होंने दाहिनी भुजा से शिव को आलिंगनबद्ध किया है और बाएँ हाथ में अद्भुत लीला–कमल है।

धवल वसन सित आभरन, उज्जवल मुक्ता माल।
सोहत शरदाभा सुखद, गुरु शिव रूप कृपाल॥

श्वेत ही जिन्होंने वस्त्र धारण किये हैं, श्वेत ही उनके आभरण हैं तथा श्वेत ही मुक्तामाल धारण किये हैं। उनके श्रीविग्रह की कान्ति शरद् के चन्द्रमा की भाँति उज्ज्वल है।

एक हाथ मुद्रा अभय, दूजे में वरदान।
तीजे कर पुस्तक लसै, चौथे निरमल ज्ञान॥

उनके एक हाथ में अभय मुद्रा है और दूसरे में वरदान है। तीसरे हाथ में ज्ञान की प्रतीक पुस्तक है तथा चौथे हाथ में ज्ञान मुद्रा है।

श्री गुरु पद नख चन्द्र सों, सवित सुधा की धार।
तन कौ धोबत सकल मल, मन कौ हरत विकार॥

श्री गुरुदेव के चरण नख चन्द्र से अमृत की धार प्रवाहित

हो रही है, जो सम्पूर्ण शरीर और मन को आप्लावित कर रही है।

जय सिद्धेश्वर रूप गुरु, जय विद्या अवतार।
जय मणिमय गुरु पादुका, जयति दया-विस्तार॥

हे सिद्धनाथ, आपकी जय हो, आप विद्या के अवतार हैं। आपकी मणिमय गुरुं पादुका की जय हो। आप दयामय हैं।

अकथ त्रिकोण कुंडकुल कैसौ। जपाकुसुम गुड़हर रंग जैसौ॥
भुजगिनि सरसिज तंतु तनी सी। दामिनि कोटि प्रभा रमनी सी॥
अरुन बरन हिम किरन सुहानी। कुंडलिनी सुर नर मुनि मानी॥
ज्योतिर्लिंग लिपटि सुख सोई। अधोमुखी तन मन सुधि खोई॥

गुदा और लिंग के बीच शरीर की समस्त क्रियाओं-गतियों का आधार योनि मण्डल है। उसे कन्द स्थान कहते हैं। यह कुलकुण्ड भी कहा जाता है। मूलाधार पद्म की कर्णिका में इच्छा ज्ञान-क्रियात्मक त्रिकोण है। यही अकथ त्रिकोण है। जपाकुसुम और गुड़हर जैसी उनकी आभा है। इसी त्रिकोण का बिन्दु ज्योतिर्लिंग है, इस ज्योतिर्लिंग से लिपटी है कुण्डलिनी। उसका अधोमुख है और साढ़े तीन वलय हैं। ज्योतिर्लिंग

प्रकाशमय है और कुण्डलिनी भी प्रकाशमय है। करोड़ों दामिनी की प्रभा जैसी चमक उस कुण्डलिनी में है। किन्तु वह कितनी पतली है? जैसी कमल नाल में से निकलने वाला रेशा।

कुंडलि सार्द्ध त्रिवलयाकारा। सत रज तम गुन प्रकृति अधारा॥
अखिल सृष्टि की कारण रूपा। संविदमय चित शक्ति अनूपा॥
रवि शशि कोटि रुचिर रंग राँची। शब्द–जननि शिव भामिनि सांची॥

अपनी पूँछ और मुँह में लिये हुये और सुषुम्णा के छिद्र को बन्द करके सर्पिणी के समान यह कुण्डलिनी शक्ति निद्रित रहती है, किन्तु वह अपनी दीप्ति से स्वयं दीप्तिमयी है। वह परमात्मा की शक्ति है। अखिल सृष्टि का कारण यही है। वह संविद और चेतनामयी शक्ति है। वही शब्द–जननी है। वह वर्णमयी है। वह वाक्‌रूपा है। वह मूलमंत्रात्मिका है अर्थात् पंचदशी के पन्द्रह बीज ही जिसका विग्रह हैं। यही त्रिगुणात्मिका और प्रकृति का आधार है। शास्त्रों में उसे नाना प्रकार से समझाया गया है। किन्तु मूल बात यह है कि सर्पिणी के बिम्ब के द्वारा ज्ञेय सम्पूर्ण विश्व ही है यह कुण्डलिनी तत्व। ठीक उसी प्रकार से

जैसे षट्चक्र बिम्ब के द्वारा यह विश्वविद्या ही है, जो योगियों और उपासकों के ज्ञान और ध्यान का विषय है। यह अध्यात्म विद्या है। यह अध्यात्म शक्ति सोई है और जो समर्थ संकल्प वाला है, वह उसे गुरु कृपा से जगा लेता है। कुण्डलिनी शक्ति को साधारण शक्ति नहीं समझा जा सकता। कुण्डलिनी उस शक्ति का नाम है, जो हजारों-हजारों परमाणु ऊर्जा केन्द्रों की शक्ति से भी प्रबल है।

हठ लय राजयोग संधानें। आगम निगम पुरान बखानें॥

राज योग हो या लय योग अथवा हठ योग, सभी में कुण्डलिनी के स्वरूप और उसके जागरण की अनन्त महिमा है और भिन्न-भिन्न तरीके से कुण्डलिनी-तत्व को समझाया गया है। कुण्डलिनी-जागरण के अनेक विधि-विधान हैं और सभी मार्गों का गंतव्य एक है, इसलिये अनेक होते हुए भी वे सभी मार्ग एक दूसरे के अनुरूप, अनुकूल और अनुपूरक हैं। उसमें भेद नहीं समझना चाहिये।

कोटि जनम जीवन फल जागें। गुरु सिद्धेश्वर उर अनुरागें॥
माया मिटै अविद्या नासै। कांत भाव रस मधुर बिलासै॥

यों तो हठ योग, राज योग और लय योग में कुण्डलिनी-जागरण और षट्चक्र-साधना के विविध प्रकार हैं और उनमें एक से एक अधिक कठिन हैं, किन्तु यह भी सच है कि जब करोड़ों पूर्व जन्मों का पुण्य-फल संचित होता है और गुरु कृपा करते हैं तब कुण्डलिनी जागरण अनायास भी हो जाता है। माया मिट जाती है, अविद्या नष्ट हो जाती है और हृदय में वह कांताभाव माधुर्यभाव जग जाता है—

आउ पियारे मोहना, पलक झांपि तोहि लेंउ।
ना मैं देखों और कों, ना तोहि देखन देंउ॥

सहस्रार में कुण्डलिनी का महाशिव से महामिलन होता है।

हुं हुंकार मंत्र की ऐनी। निद्रा तजि जागहु रस देनी॥
आनंद ज्ञान अमृत रस दीजै। विषय-वासना तम हर लीजै॥

हे कुण्डलिनी, आप निद्रा को छोड़कर सचेत हों तथा मुझे

ज्ञान, अमृत और आनन्द प्रदान करने के लिये अभ्युत्थान करें। मेरी विषय-वासना का अंधकार हरण कर लें।

ऐसा संकल्प करके 'हुं' इस मन्त्र से कुण्डलिनी को जगाना चाहिये। तत्पश्चात् पवन-दहन, कुम्भक और पूरक के योग से मोक्ष द्वार का उद्घाटन करना चाहिये अर्थात् मूलाधार को कुम्भक की अग्नि से प्रदीप्त करके हूं-हूं इस शब्द-संकेत से कुण्डलिनी को चलित करना चाहिये।

सुषमन गली भली सौदामिनी। पति के महल चली कुल भामिनि॥

यहाँ कहते हैं कि कुलभामिनी (अर्थात् कुण्डलिनी) अपने पति के महल (अर्थात् सहस्रार चक्र की ओर) चली। किस रास्ते से चली? तो कहते हैं कि सुषुमना-गली में होकर चली, सुषुम्णा नाड़ी से होकर चली। कैसी गली है? ऐसी जिसमें सौदामिनी का प्रकाश है।

छत्तीसन की बनी हवेली। छह मंजिल बारी अलबेली।

सम्पूर्ण विराट् छत्तीस तत्वों से ही बना है। शिव के बिना शक्ति नहीं रह सकती और शक्ति के बिना शिव नहीं रह सकते।

शिव और शक्ति ३६ तत्वों में प्रथम दो हैं।

शरीर इन्हीं छत्तीस तत्वों की हवेली है। और छह चक्र ही उसकी छह मंजिलें हैं।

मूलाधार चतुर्दल सोहै। व श ष स बीजाक्षर जग मोहै॥
अवनि सुगंधि गजानन देवा। करत साकिनी की सुर सेवा॥

रीढ़ की हड्डी के सबसे नीचे के भाग में गुदा और लिंग के मध्य भाग में सोने जैसे वर्ण का मूलाधार चक्र है। जिस केन्द्र में समस्त जीवमनोभाव संगृहीत रहते हैं, उसे मूलाधार चक्र कहते हैं। मूलाधार कमल चार दल का है। दाहिनी ओर से वं, शं, षं, सं चार दलों के चार बीज मन्त्र हैं। मूलाधार पृथ्वी तत्व का प्रतीक है तथा सुगन्धि उसकी तन्मात्रा है। मूलाधार के अधिपति गणेश हैं तथा यहाँ साकिनी योगिनी का निवास है। पृथ्वी का बीज है लं।

ब ल बीजन जल-महल बनायौ। स्वाधिष्ठान सरस सुख पायौ॥
काकिनि अंबा तहां निवासै। चतुरानन रवि अयुत प्रकासै॥

मूलाधार चक्र के ऊपर लिंग मूल में स्वाधिष्ठान विद्युद्

वर्ण (अथवा सिन्दूरी रंग का) षड्दल कमल है। इस पर बं, भं, मं, यं, रं, लं बीज मन्त्र है। इस स्वाधिष्ठान का तत्व जल है। वं बीज है। वाहन मकर है तथा काकिनी शक्ति का अवस्थान है। यहाँ दस हजार सूर्यों का प्रकाश है।

नाभि कमल मणि पूरक सोहै। ड फ बीजाक्षर दशदल मोहै॥
नील रूप लाकिनि को भावै। प्रलयागिनि तहं पाप जरावै॥

नाभिमूल में मेघ वर्ण मणिपूर नामक दशदल पद्म हैं। जिसके दश दलों पर डं, ढं, णं, तं, दं, धं, नं, पं, फं बीज मन्त्र हैं। इस मणिपूर पद्म में सर्वमंगल दायक रुद्र सिद्धलिंग और लाकिनी का अवस्थान है।

हृदय चक्र द्वादस-दल बारौ। परसि मंत्र क ठ वायु विहारौ॥
हंस युगल तहं अजपा जापै। राकिनी अनहद नाद अलापै॥

मणिपूर के ऊपर हृदय चक्र किंवा अनाहत चक्र है। बंधूक पुष्प के रंग जैसा है तथा द्वादश दल है, जिन पर कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, टं, ठं ये बारह बीजाक्षर हैं। यह अनहद उपासना का केन्द्र है। "सो हं, हं स" रूप में यहाँ अजपाजाप

चलता है। इस पद्म की कर्णिका के बीच में विद्युत्प्रभा से युक्त धूम्रवर्ण पवन देव हैं, तथा इस षट्कोण वायुमण्डल में "यं" बीज के ऊपर ईशान वाणलिंग और राकिनी शक्ति है।

कंठ व्योम में सबद रचायौ। षोडश नित्या कौ मन भायौ॥
चक्र विशुद्ध चन्द्र छवि छाजै। हर-गौरी डाकिनी विराजै॥

कंठमूल में विशुद्ध चक्र का स्थान है। धूम्रवर्ण के इस पद्म में सोलह दल हैं, जिन पर षोडशी की कला रूप सोलह नित्या हैं—अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, लृं, ॡं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः। इसकी कर्णिका के बीच में आकाश मण्डल है। हं बीज है। इसकी गोदी में अर्द्धनारीश्वर शिव अथवा हर-गौरी हैं।

भ्रूविच गिरि कैलाश सुहावै। योगिन मन मानस लहरावै॥
ह-क्ष बीज कौ ठौर ठिकानौ। आगम आज्ञा चक्र बखानौ॥
द्विदल कमल हाकिनी विराजै। शिव चिद अंब संग सुख साजै॥

भौंहों के बीच में आज्ञा नामक चक्र का स्थान है—"आज्ञाख्यं द्विदलं शुभ्रं कर्णिकायां मनोलयम्।" आज्ञाचक्र रूप चन्द्र मण्डल में अमृत पिण्ड है, जिसका अमृत बिन्दु नीचे गिरने

से यह शरीर जीवित है। योगीजन विपरीतकरणी खेचरी-मुद्रा द्वारा ऊपर ही रोक कर अमृत प्राप्त करते हैं। आज्ञाचक्र में मन सूक्ष्म रूप में रहता है। यहीं कोटि सूर्य-चन्द्र के प्रकाश धारण किये वामपार्श्व में चिदम्बा के साथ परम शम्भु का निवास है।

ता ऊपर चिंतामनि आंगन। कल्प वल्लरी कुंज सुहावन॥

आज्ञा चक्र के ऊपर तो सहस्रार है, जहाँ चिन्तामणि का आंगन है और उस आंगन में कल्पलता से आच्छादित भगवती की रस-निकुंज है।

कुंडलिनी षट्चक्रन भेदै। विधि हरि रुद्र ग्रंथि को छेदै॥

कुण्डलिनी शक्ति सुषुम्ना के मध्य प्रदेश से विद्युत् छटा की भाँति नाभि में स्थित विष्णु ग्रन्थि, हृदय में स्थित ब्रह्म ग्रन्थि और आज्ञाचक्र में स्थित रुद्र ग्रन्थि छेदन करती हुई षट्चक्रों को पार कर जाती है।

ब्रह्मशिरा में धावै कैसे। सुरसरि सिंधु प्रवाहै तैसे॥
प्रबल प्रवाह छतीसन भेंटै। निज में सब विस्तार समेटै॥
पृथिवी रस, रस तेज समावै। तेज वायु तिमि नभहिं बिलावै॥

नभ हंकार बुद्धि मन मेलै। मानस प्रकृति जीव में हेलै॥
जीव नियति पुनि काल में, काल कला मिल जाहिं॥
तत्व अविद्या में घुरै, माया विद्या मांहि॥
विद्या ईश सदाशिव पावै। शक्ति परम शिव के मन भावै॥

प्रकाशमयी कुण्डलिनी ब्रह्मशिरा में उतनी ही वेगमयी है, जिस प्रकार हिमालय से उतरकर प्रवाहित होने वाली गंगा। और जिस प्रकार गंगा अपने प्रवाह से पर्वत-खण्डों, वृक्षों आदि को अपने साथ बहा ले जाती है उसी प्रकार कुण्डलिनी जब मूलाधार से स्वाधिष्ठान और स्वाधिष्ठान से मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञाचक्र को पार करती है तो अपने प्रवाह में तत्तद् चक्रों को भी ले आती है। सभी चक्र सहस्रार में मिलकर श्रीयन्त्र बना देते हैं। तत्पश्चात छत्तीसौ तत्व भी समाहित हो जाते हैं। पृथ्वी तत्व रस में, रस फिर तेज में, तेज वायु में, वायु आकाश में तथा आकाश अहंकार में, अहंकार बुद्धि में, बुद्धि मन में, मन प्रकृति में, प्रकृति जीव में, जीव नियति में, नियति काल में, काल कला में, कला राग तत्व में, राग तत्व अविद्या में, अविद्या माया में,

माया विद्या में, विद्या ईश में, ईश सदाशिव में, सदाशिव शक्ति में और शक्ति परम शिव में एकाकार एकरस होकर समाहित हो जाती है।

जब कुण्डलिनी परम शिव सहस्रार में पहुँच जाती है तो षट्चक्र उसी में लीन हो जाते हैं फिर अमृत प्रभाव से नीचे उतरते हुये सभी तत्व तथा चक्र यथावत् हो जाते हैं। यही उत्पत्ति और प्रलय की क्रिया है।

चक्र एक में एक मिलावै। यंत्रराज श्री चक्र बनावै॥

मूलाधार से लेकर सहस्रदल पर्यन्त षट्चक्रों को एक ही स्थान पर एकत्र करने से तैतालीस त्रिकोणात्मक यन्त्र बनते हैं।

कुंडलिनी कर कौर छतीसौ। सहस रहस रस रास थलीकौ॥
पिय की सेज सहसदल बारी। अक्ष कलिन सौं सखिन सम्हारी॥
रास रचै पिय संग रंग राती। परम पियूष पियै मदमाती॥
भर भर चसक सुधा बरसावै। मन प्रानन निज रूप बनावै॥
छिन आरोह छिनक अवरोहै। तडिता आत्म प्रभा मुद मोहै॥

इस प्रकार पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, गन्ध, रस,

रूप, स्पर्श, शब्द, उपस्थ, पायु, पाद, पाणि, वाक्, घ्राण, जिह्वा, चक्षु, त्वक्, क्षोत्र, अहंकार, बुद्धि, मन, प्रकृति, जीव, नियति, काल, राग, कला, अविद्या, माया, शुद्धविद्या, ईश्वर सदाशिव, शक्ति और शिव को कुण्डलिनी अपने में कवलित कर लेती है तथा सहस्रार-चक्र में एकान्त रस रास स्थली में, जहाँ प्रियतम की सेज है। वह सेज जिसे सखियों ने अ से क्ष पर्यन्त पचास वर्णों रूप कलियों से सजाया सँवारा है। कुण्डलिनी वहाँ परम शिव के साथ रास करती रहती है और परमामृत का पान करती है। वहाँ से वह षट्चक्रों का सिंचन करती है तथा सम्पूर्ण शरीर उस अमृत से आप्लावित हो जाता है। इस प्रकार कुण्डलिनी मूलाधार से सहस्रार में और सहस्रार से मूलाधार में आरोह-अवरोह करती हुई सारे प्रपंच को जीवित करती है अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र अकुल स्थान से अमृत पान करके कुल रूप अपने स्थान पर लौटती है। पुनः अमृतपान के लिये कुल स्थान (मूलाधार) से ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर आनन्दित होती है।

प्रणत जनन सौभाग्य सम्हारै। कोटि अनन्त ब्रह्मांड विहारै॥

प्रणत–जन अर्थात् साधक लोगों का सौभाग्य सँवारते हुये कुण्डलिनी अनन्त कोटि ब्रह्मांडों में विहार करती है।

गुरु कृपाल जापै ढरैं, अम्ब होंय अनुकूल।
पावै परम रहस्य यह, आत्म शक्ति कौ मूल॥
यह विद्या संकेतिनी, साधन सिद्धि अनूप।
आप आपमें पावही, पूर्ण काम शिव रूप॥

कुण्डलिनी का ज्ञान परम रहस्यमय है तथा जिस पर गुरु कृपा हो तथा जगदम्बा जिस पर अनुकूल हो, वही आत्मशक्ति के मूल रूप कुण्डलिनी के तत्व को समझ पाता है। इस विद्या को संकेत विद्या कहते हैं और शास्त्रों में इसे संकेत के द्वारा ही समझाया गया है। जो इसे जान लेता है, वह अपने में अपने को पा जाता है। वह पूर्ण काम और शिव रूप हो जाता है।

वन्दना (आरती)

जय शरणं वरणं नमो नमः

श्री मातेश्वरि जय त्रिपुरेश्वरि राजेश्वरि जय नमो नमः।
करुणामयी सकल अघ हारिणि अमृत वर्षिणी नमो नमः ॥
जय शरणं वरणं नमो नमः श्री मातेश्वरि जय त्रिपुरेश्वरि।
अशुभ विनाशिनी, सब सुख दायिनी खलदल नाशिनि नमो नमः ॥
भण्डासुर वधकारिणी जय माँ करुणा कलिते नमो नमः।
जय शरणं वरणं नमो नमः श्री मातेश्वरि जय त्रिपुरेश्वरि ॥
भव भय हारिणी कष्ट निवारिणी शरणागति दो नमो नमः।
शिव भामिनी साधक मन हारिणी आदि शक्ति जय नमो नमः ॥
जय शरणं वरणं नमो नमः जय त्रिपुर सुन्दरी नमो नमः।
जय राजेश्वरी जय नमो नमः जय ललिते माता नमो नमः ॥
श्री मातेश्वरी जय त्रिपुरेश्वरि राजेश्वरि जय नमो नमः।
जय शरणं वरणं नमो नमः ॥

श्री गुरुदेव की आरती

ओ३म् जय गुरु बलिहारी, स्वामी जय गुरु बलिहारी।
जय जय मोह विनाशक, भव बन्धन हारी॥ ओ३म् जय गुरु...
ब्रह्मा, विष्णु, सदाशिव, गुरु मूरत धारी॥ स्वामी गुरु...
वेद पुराण बखानी, गुरु महिमा भारी॥ ओ३म् जय गुरु...
जप तप तीरथ संयम दान, विविध दीजे॥ स्वामी दान...
गुरु बिन ज्ञान न होवे, कोटि जतन कीजे॥ ओ३म् जय गुरु...
माया मोह नदी में, जीव बहे सारे॥ स्वामी ज़ीव...
नाम जहाज बिठाकर, गुरु पल में तारे॥ ओ३म् जय गुरु...
काम, क्रोध, मद, मत्सर, चोर बड़े भारी॥ स्वामी चोर...
ज्ञान खड्ग ले कर में गुरु सब संहारे॥ ओ३म् जय गुरु...
नाना पंथ जगत में, निज-निज गुण गावें॥ स्वामी निज...
सब का सार बताकर, गुरु मारग लावें॥ ओ३म् जय गुरु...
गुरु चरणामृत निर्मल, सब पातक हारी॥ स्वामी सब...
सुनत बचन तम नासे, सब संशय हारी॥ ओ३म् जय गुरु...
तन मन धन सब अर्पण, गुरु चरनन कीजे॥ स्वामी गुरु...
ब्रह्मानन्द परमपद, मोक्ष गति दीजे॥ ओ३म् जय गुरु...